अनुच्छेद लेखन

किसी भाव विशेष या विचार विशेष को व्यक्त करने के लिए कहते हैं।अनुच्छेद अपने-आप में स्वतंत्र एवं पूर्ण होता है। अत: यह एक प्रभावी एवं उपयोगी लेखन-शैली है।

अनुच्छेद लेखन हेतु निम्नलिखित विशेषताओं का होना आवश्यक है

1. **भाव या विषय का अच्छी तरह से ज्ञान।**
2. **संबंधित भाषा के शब्द-भंडार पर अधिकार।**
3. **भाषा के व्याकरणिक बिंदुओं का ज्ञान।**
4. **विषय से संबंधित उक्तियों का संग्रह।**

अनुच्छेद लेखन से संबंधित ध्यान देने योग्य बातें-

1. **यह एक सक्षिप्त शैली है। अत: विषय-केंद्रित रहना चाहिए।**
2. **एक भी वाक्य अनावश्यक नहीं होना चाहिए।**
3. **अपनी बात संक्षिप्त एवं प्रभावपूर्ण तरीके से व्यक्त करनी चाहिए।**
4. **अनुच्छेद का प्रथम एवं अंतिम वाक्य प्रभावी होना चाहिए।**
5. **अनुच्छेद के प्रत्येक वाक्य परस्पर संबद्ध होने चाहिए।**
6. **अनुच्छेद की भाषा शैली विषयानुरूप होनी चाहिए।**
7. **अनुच्छेद का प्रथम वाक्य ऐसा होना चाहिए, जिसे पढ़कर पाठक के मन में पूरा अनुच्छेद पढ़ने हेतु कौतुहल जागृत हो।**
8. **भाव या विषय की स्पष्टता में अधूरापन नहीं होना चाहिए।**

1. आधुनिकता और नारी

आधुनिकता एक विचारधारा है। पुराने से स्वयं को अलग करके नए विचार व दिशा बनाना ही आधुनिकता है। हम आधुनिक युग उस समय से प्रारंभ करते हैं जब दुनिया में शासन व जीवन में नए स्वरूप का प्रादुर्भाव हुआ। नई जीवन-व्यवस्था प्रारंभ हुई। इस प्रकार से समाज का क्रमिक विकास हुआ। किसी भी समाज के विकास में नर-नारी का समान योगदान होता है। प्राचीन काल में मातृसत्तात्मक व्यवस्था थी। धीरे-धीरे राजवंशों का प्रचलन हुआ और नारी का महत्व घटने लगा। मध्यकाल में नारी की स्थिति और गिर गई।

सामंतवादी संस्कृति ने नारी को मात्र भोग्या बना दिया। वह पुरुष की विलास-सामग्री बन गई और चारदीवारी में कैद कर दी गई। हालाँकि आधुनिक युग की शुरुआत से जीवन के हर क्षेत्र में परिवर्तन आ गया। नारी की स्थिति सुधारने के लिए प्रयास किए जाने लगे। भारत में समाज-सुधारकों ने सती-प्रथा, शिशु-हत्या प्रथा आदि कुप्रथाओं का डटकर विरोध किया। स्त्री-शिक्षा व विधवा-विवाह के प्रोत्साहन के लिए सरकारी व गैर-सरकारी प्रयास किए गए। नारी-सुधार आंदोलन शुरू हुए।

आजादी मिलने के बाद देश में लोकतंत्र स्थापित हुआ। नए शासन में स्त्रियों को पुरुष के बराबर का दर्जा दिया गया। सैद्धांतिक व कानूनी तौर पर नारी को वे समस्त अधिकार प्राप्त हो गए जो पुरुष को उपलब्ध हैं। सच्चे अर्थों में इन समस्त अधिकारों का उपभोग करने वाली, वर्तमान जीवन की चेतना से पूर्णत: अनुरंजित नारी का नाम ही आधुनिक नारी है। आधुनिक नारी का अर्थ, रूप व सौंदर्य से संपन्न नारी से कतई नहीं है। यद्यपि भारत में विकास के चाहे कितने ही दावे किए जाएँ तथापि आज भी वास्तविकता यह है कि स्त्रियों को बराबरी का अधिकार नहीं दिया गया है। हालाँकि अब समय के साथ-साथ वैश्विक पटल पर स्थिति में परिवर्तन आ रहा है।

इस परिवर्तन में नारी को दो स्तरों पर संघर्ष करना पड़ता है। पहला समाज नारी को परंपरागत दृष्टिकोण से देखता है। इस संघर्ष में नारी कुछ हद तक दिग्भ्रमित हो चुकी है। वह आधुनिकता के नाम पर उच्छंखलता को ग्रहण कर रही है। भारतीय नारी को चाहिए कि वह समाज की श्रेष्ठ जीवनोपयोगी परंपराओं को स्वीकार करे तथा पश्चिम के अंधानुकरण से बचे। नारी के समक्ष दूसरा संघर्ष क्रियात्मक है। पुरुष नारी पर अपना अधिकार समझता है। सैद्धांतिक तौर पर वह नारी की स्वतंत्रता का हिमायती है, परंतु व्यावहारिक स्तर पर इसे प्रदान करने में हिचकता है।

उच्च व शिक्षित वर्ग में भी इस कारण संघर्ष रहता है। इस बात का उदाहरण महिला आरक्षण विधेयक है। सभी राजनीतिक दल इसे लागू करने का विरोध कर रहे हैं। सामान्य बुद्धस्तर के समुदाय के बीच आज भी नारी जटिल परिस्थितियों में जीवन व्यतीत कर रही है। नारी-मुक्ति का प्रमुख आधार है उसका आर्थिक रूप से स्वावलंबी होना। जब नारी आर्थिक रूप से समर्थ होगी तब उसे निर्णय करने का अधिकार मिलेगा। कभी-कभी नौकरी भी उसे परिवार में प्रमुख स्थान नहीं दिला पाती। बाहर निकलने पर नारी को स्थान-स्थान पर बाधाएँ झेलनी पड़ती हैं। बुरे लोगों के संपर्क में पड़कर वह पतन के गर्त में चली जाती है। नारी को इस स्थिति में सँभलकर रहना चाहिए।

उन्हें समझना होगा कि जिस प्रकार उच्च शिक्षा, गंभीर चिंतन व श्रेष्ठ आचरण आदर्श पुरुष के सनातन लक्षण हैं, उसी प्रकार नारी के भी। नारी को इन गुणों को आधुनिक संदर्भों में विकसित करना होगा।

2. फिल्मों की सामाजिक भूमिका

फ़िल्में आधुनिक जीवन में मनोरंजन का सर्वोत्तम साधन हैं। ये समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को प्रभावित करती हैं। फ़िल्मों में कलाकारों के अभिनय को लोग अपने जीवन में उतारने की कोशिश करते हैं। इस दृष्टि से फ़िल्मों का सामाजिक दायित्व भी बनता है। वे केवल मनोरंजन का ही नहीं, अपितु सामाजिक बुराइयों को दूर करने का भी साधन हैं। फ़िल्में समाज में व्याप्त विभिन्न बुराइयों को दूर करके स्वस्थ वातावरण के निर्माण में सहायता करती हैं। हालाँकि समाज में रहते हुए हमें इन बुराइयों की भयानकता का पता नहीं चलता। फिल्म देखकर इनकी बुराइयों से हम दो-चार होते हैं।

उदाहरणस्वरूप 'प्यासा' और 'प्रभात' जैसी फ़िल्मों को देखकर अनेक नारियों ने वेश्यावृत्ति त्यागकर स्वस्थ जीवन जीना शुरू किया। 'पा' फ़िल्म असमय वृद्ध होने वाले बच्चों की कठिनाइयों को दर्शाती है। इसी प्रकार से फ़िल्में समाज का सूक्ष्म इतिहास प्रकट करती हैं। इतिहासकार जहाँ इतिहास की स्थूल घटनाओं को शब्दबद्ध करता है, वहाँ फ़िल्में व्यक्ति के मन में छिपे उल्लास और पीड़ा की भावना को व्यक्त करती हैं। 'गदर' फ़िल्म में भारत-पाक युद्ध तथा 1971 की प्रमुख घटनाओं को दर्शाया गया है। 'रँग दे बसंती' फ़िल्म में आजादी के संघर्ष को संवेदनशील तरीके से दिखाया गया है। 'गोदान' में 1930 के समय के पूँजीपतियों के शोषण तथा किसानों की करुण जीवन-गाथा चित्रित है।

आधुनिक समाज श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों से दूर होता जा रहा है। इस दूरी को कम करने में फ़िल्मों की अह भूमिका है। 'आँधी' और 'मौसम" फ़िल्में कमलेश्वर की साहित्यिक कृतियों पर आधारित हैं, तो शरतचंद्र चटर्जी के 'देवदास' उपन्यास पर हिंदी व बांग्ला सहित कई भाषाओं में अनेक सफल फ़िल्में बन चुकी हैं। फ़िल्मों के गीत भी सुख-दुख के साथी बन जाते हैं। वे व्यक्ति के एकाकीपन, निराशा, दुख आदि को कम करते हैं। स्वतंत्रता दिवस व गणतत्र दिवस पर 'ऐ मेरे वतन के लोगो' गीत को सुनकर लोगों में आज भी देशभक्ति का जज्बा जाग उठता है। विदाई के अवसर पर 'पी के घर आज प्यारी दुल्हनिया चली' गीत सुनकर वधू पक्ष के लोग भावुक हो उठते हैं। हालाँकि फ़िल्मों के केवल सकारात्मक प्रभाव ही समाज पर पड़ते हैं, ऐसा नहीं है। आज के युग में युवा फ़िल्मों से अधिक गुमराह हो रहे हैं।

फ़िल्मों में अपराध करने के नए-नए तरीके दिखाए जाते हैं, जिनका अनुसरण युवा करते हैं। नित्य प्रति हत्या के नए तरीके देखने में आ रहे हैं। बच्चे इससे सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। वे झूठ बोलना, चोरी करना, घर से भागना आदि गलत आदतें प्राय: फ़िल्मों से ही सीखते हैं। नारी देह को प्रदर्शन की वस्तु फ़िल्मों ने ही बनाई है। लड़कियाँ मिनी स्कर्ट को आधुनिकता का पर्याय समझने लगी हैं तो लड़के फटी जींस व गले में स्कार्फ को आकर्षण का केंद्र मानते हैं। आजकल के फ़िल्म-निर्माता पैसा कमाने के लिए सस्ते गीतों पर अश्लील नृत्य करवाते हैं।

छोटे-छोटे बच्चों की जबान पर चालू भाषा के गीत होते हैं। आजकल गानों में भी भद्दी गालियों का प्रयोग बढ़ने लगा है। फ़िल्मों के शीर्षक 'कमीने' आदि बच्चों को गलत प्रवृत्ति की ओर अग्रसर करते हैं। फ़िल्मों के इस रूप की तुलना कैंसर से की जा सकती है। यह कैंसर धीरे-धीरे हमारे समाज के शरीर को जहरीला कर रहा है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि फ़िल्में समाज को तभी नयी दिशा दे सकती हैं जब वे कोरी व्यावसायिकता से ऊपर उठे तथा समाज की समस्याओं को सकारात्मक ढंग से अभिव्यक्त करें।

<u>गृहकार्य :-</u>

1 - कोरोना महामारी के बीच जन जीवन -पर एक सारगर्भित अनुच्छेद लिखिए ।